ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
ISSN No.: 2347-2944, RNI:UPBIL04292, REG. No.: 561/2013-2014 Vol.-1, No.-1, PP-315-318, YEAR-2014

मैथिली शरण गुप्त के काव्य में लोक मंगल भावना

❑ दर्शना कुमारी

सार– *मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के प्रकांड विद्वान कवि हैं। मैथिलीशरण गुप्त एक उदार वैश्णव भक्त हैं और राम में उनकी अनन्य भक्ति है यदि राम है तो सब है। और यदि वह राम ईश्वर ना होकर केवल मानव है, तो उनकी आस्था उस मानव राम से भिन्न और किसी में नहीं है। तात्पर्य यह है कि राम को ईश्वर कहिए या मानव वही मात्र उनके आराध्य हैं और उनकी कर्म ही आर्य जाति के धर्म है इसी के प्रतिष्ठान के लिए उनका अवतार हुआ है भली भांति जानते हैं कि वेद आर्य संस्कृति के आधार पर हैं तथा यज्ञ उनके प्रमुख साधन राम की वाणी इसी सत्य का उद्घोष करती है– उच्चारित होती चले वेद की वाणी, गूंजे गिरि कानन सिंधु पार कल्याणी, अंबर से पावन होम धूम लहराए। ऐसी कामना करते हुए वैदिक संस्कृति की उद्घोषणा करते हैं।*

श्री मैथिलीशरण गुप्त अपने समय के अधिक भाव प्रवणता और काव्य प्रतिभा में अग्रणीय थे। "द्विवेदी जी की इतिवृत्त आत्मा कविता का विरोध होने पर इन्होंने क्षेत्र में अभिव्यंजना की नवीन प्रणाली और मुक्तक गीतों की सृष्टि की इस क्षेत्र में इन पर रविन्द्रनाथ ठाकुर का प्रभाव पड़ा था, ठाकुर महोदय की अभिव्यक्ति पूर्ण रहस्यवादी रचनाओं से आकशित होकर गुप्त जी ने इनका भी हिंदी में शुद्ध पाठ किया इस कार्य में सफलता मिली और जनता ने इस नवीन प्रयास का हृदय से स्वागत किया।"[1]

काव्य के क्षेत्र में आचार्य द्विवेदी का सबसे बड़ा काम मैथिलीशरण गुप्त का निर्माण था। गुप्त जी की सारी कविता उनकी जीवन व्यापी साधना द्विवेदी जी के आदर्शों पर लंबित है इस साधना से हिन्दी साहित्य लोक मंगल काव्य श्री मैथिलीशरण गुप्त ने श्री आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की बातें पर अपनी काव्य साधना को उठाना खड़ी बोली के विकास के प्रति द्विवेदी जी पूर्ण आश्वस्त थे। इसलिए उन्होनें बड़ी निर्भीक वाणी में संस्कृत में लिखा।

"ब्रज भाषा की कविता के महत्व के जी तलाशने का समय गया अब फिर नहीं आने का। ब्रज की बोली में कविता ना करने या उस बोली को ना जानने वाले चाहे लंगूर बन जाए, इससे बोलचाल की भाषा की कविता का प्रभाव बंद ना होगा।"[2]

"बाबू मैथिलीशरण गुप्त द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि हैं यद्यपि उन्होने परवर्ती काव्य की शैलियां भी अपनाएं उनकी कविता में द्विवेदी युग के अन्य कवियों की भांति इतिवृत्त आत्मकताकी प्रधानता है परन्तु जहां अन्य कवि छोटी–छोटी मुक्तक कविताओं तक ही रह गए वहां उन्होंने मुक्तक के अतिरिक्त खंडकाव्य महाकाव्य की भी रचना की। रंग में भंग, गुरूकुल जयद्रथ वध, विकट भट पंचवटी बैतालिक, साकेत, द्वापर, यशोधरा, तिलोत्मता, नहुप लगभग एक दर्जन से अधिक कथा प्रधान काव्य से उन्होंने हिंदी काव्य भंडार को अलंकृत किया। इन काव्यों को विशय हिंदू जातीय वीर एवं पौराणिक पुरूश या अवतार हैं। इन सब कथाओं में गुप्त जी मनुश्य के परिचित सुख–दुख का वातावरण लेकर उपस्थित होते हैं। लगभग सभी में करूणामूलक मानव प्रेम विश्व एवं बलिदान का संकेत है।

श्री मैथिलीशरण गुप्त समाज के सभी महत्वपूर्ण अंगों पर अपनी दृश्टि रखते हैं। इसलिए आधुनिक सामाजिक अधोगति का चित्र उन्हें भी आहत करता है और हिंदू समाज में ब्राहमणों से विशेश प्रार्थना करते हैं–

सहायक आचार्या, बी०डी०ए०म०प्यु० कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय शिकोहाबाद, फिरोजाबाद (उ०प्र०), भारत

तुम हो कर भीकुशपाणि विश्व के शासक थे।
बल विक्रम बुद्धि विकास त्रास दुखनाशक थे।
सब बातों में अगुआ ही पूछे जाते हैं।[3]

भक्ति भावना विनय शील व्यक्तित्व की एक प्रमुख विशेशता कही जाती है गुप्तजी प्रकृति भक्ति भाव से आप और थे वैश्णव भावना उन्हें पैतृक संस्कारों के रूप में मिली थी उनका परिवार सुसंस्कृत होने के साथ–साथ युग की नूतन किरणों से भी आलोकित है तथापि गुप्तजी में अराधना आत्मिक भाव अधिक था, प्रभु की आराधना के मूल स्वरूप में आपस में कोई अंतर नहीं आता। बाबू मैथिलीशरण गुप्त प्रभु–द्वारा पर लगी भीड़ से परेशान हैं आखिर प्रभु तक कैसे पहुंचे अतः इस परिस्थिति की सूचना वे अपने आराध्य को देन के लिए विवश है–

तेरे घर के द्वार बहुत है किस से होकर आऊँगा मैं
सब द्वारों पर भीड़ बडी है, कैसे बीत रहा हूँ मैं.....[4]

डॉ उदय भान सिंह का अभिमत है कि कि धार्मिक कविता के क्षेत्र में उस युग के कवियों की मनोवृति की नवीनता अनेक रूपों में व्यक्त हुई पौराणिक अवतारवाद से प्रभावित भक्ति काल में राम और कृश्ण को ईश्वर के रूप में चित्रित किया था बींसवी सदी के विज्ञान युग में उनके मानवीय करण की प्रक्रिया सर्वथा स्वाभाविक भी थी, उन्होंने प्रिय प्रवास और साकेत तथा पंचवटी में कृश्ण और राम का मानव रूप में चरित्र चित्रण करने वाले अयोध्या सिंह उपाध्याय मैथिलीशरण गुप्त ने अपना नामांकन शुरू किया निवेदन है कि कृश्ण और राम करना है महापुरूश के रूप में चित्रित करने का कारण यह है। आधुनिक विज्ञान उन्हें ईश्वर स्वीकार करने के लिए प्रस्तुत नहीं था और उन कवियों को साहित्य जगत को ऐसी वस्तु देनी थी, जो अवतारवादियों तथा अनअवतारवादियों को समान रूप से रोचक और उपयोगी हो वाल्मीकी और व्यास की भांति रामाकृश्ण को महापुरूष के रूप में प्रतिश्ठित करके द्विवेदी युग में हिंदी जनता के सामने अनुकरणीय चरित्र का आदर्श उपस्थित किया।[5]

गुप्त जी की राष्ट्रीय कृति की अपेक्षा जातीय कृति अधिक है इसमें गुप्त जी के रक्तदाता हिंदू संस्कार बोल रहे हैं–

हिंदू धन्य तुम्हारी सृश्टि, तद्पि हाय तुम अस्त–व्यस्त इसलिए यह रूदन समस्त।[6] उन्होंने सभी धर्मों को हिंदुत्व के अंतर्गत समझ लिया संस्कृति के प्रति उनका दृष्टिकोण समन्वयक है।

विष्णु प्रिया काव्य में चैतन्य महाप्रभु कथा उनकी ग्रहणी विष्णु प्रिया का चरित्र निरूपित किया है विष्णुप्रिया में मध्य युग की नारी का संवेदनात्मक गौरव कालमुखी करना कवि का लक्ष्य रहा है, जो पति द्वारा परित्यक्त हुई जीवन की यंत्रणा उसने निरालंब होकर स्वयं/निजी और स्वजनों की सेवा की उन्होनें नारी के व्यक्तित्व को पुनः प्रतिष्ठित किया और उसकी उच्च सरिता को गौरवान्वित किया। वे कथावस्तु को वर्णनात्मक बनाते हैं। विष्णु प्रिया के चरित्र को व्यवस्था में पद्धति से उभारते हैं। भारतीय संस्कृति में भारतीय नारी की आश्रम धर्म के अनुरूप जो आदर्श है विष्णु प्रिया उसकी मूर्ति प्रतिमा है चैतन्य ने अपनी प्रेम साधना के लिए यह धर्म का परित्याग किया पर विष्णु प्रिया ने अपनी प्रेम साधना का उन्नयन धर्म के पालन में किया यही उसका लोग धर्म था कवि ने वाणी दी है–

नाथ साधु हो तुम मैं भी हूं साध्वी कुल कुलबाला। .
भूले आश्रम धर्म आज तुम काट गए हो स्वंय कुल–द्रुम।
पर है मेरा धर्म व्यर्थ यदि तुम्हें स्वकर्म ना साला।।[7]

महाप्रभु चैतन्य ने अपनी मां को संदेश भेजा –

मां तुम्हारी सेवा छोड़धर्म भूल अपना
सन्यासी हुआ मैं मत्त, मुझको क्षमा करो।[8]

गुप्तजी भारतीय संस्कृति के शुभ पक्ष को प्रतिश्ठित करने के लिए सचेष्ट रहे है। उसमें उन्हें पूरी सफलता भी मिली है। भारतीय संस्कृति की नारी की चरम अभिव्यक्ति उन्होंने इस प्रकार दी है–

नारी लेने नहीं लोक में देने आती है
अश्रु शेश रखकर वह उनसे प्रभु पद धो जाती है।।
पर देन में विनय ना होकर जहां गर्व होता हैं।
तपस्त्याग का पर्व हमारा वहीं स्वर्ग होता है।।[9]

साकेत में मैथिलीशरण गुप्त ने नर के साथ

नारी भी शिक्षित की भावना जगाई है वे कहते हैं आदर्श समाज वही कहा जा सकता है जहां नारी स्वयं आगे बढ़ता समाज वही कहा जा सकता है जहां नारी स्वंय आगे प्रजा का भी ज्ञानवान होना अति आवश्यक है। वह कहते हैं कि साकेत के पौर जनता तक शिक्षित थे राज परिवार का तो कहना ही क्या–

स्वास्थ्य शिक्षित शिश्ट उद्यमी सभी, वाह्य योगी, आंतरिक योगी सभी।[10]

उर्मिला चित्रकला में अत्यंत उसने अभिशेक का काल्पनिक चित्र बनाकर लक्ष्मण को क्षण मात्र में आश्चर्यचकित कर दिया–चित्र भी था चित्र और विचित्र भी। रह गएचित्रस्थ से सौमित्र भी।। [11]

अपने उपवनमें वहपुरवाला शाला खुलवा कर शिक्षा का बनने का भी विचार प्रकट करती है।

राम और सीता रामअवतार और उसकी माया की शक्ति बनकर अवतरित हुए हैं। दोनों की दृश्टियों में ही शक्ति का नित्य विकास होता है। गुप्त जी के राम कहते हैं– हम को लेकर ही अतिवृश्टि की क्रीड़ा । आनंदमई नित फसल की पीड़ा। ईश्वर के अंशरूप में रात का अवतारी रूप उन्होंन केवल दैवी शक्ति होने के नाते ही मान्य नहीं है बल्कि उसमें मानवता के आदर्शों की अभिव्यक्ति होने को कारण उसमें विशेश ग्रहण योग्य है–

किसलिए यह खेल प्रभु ने है किया।
मनुज बनकर मानवी का पयपिया।।
भक्तवत्सलता इसी का नाम है।
और वह लोकेश लीला धाम है।[12]

मैथिलीशरण गुप्त कहते हैं अपनी मानत्व में ईश्वर को लय करने वाले मर्यादा पुरूषोत्तम आदर्श राम है। समय–समय पर उसमें समस्त मानवीय प्रकृति के अनुसार प्रकाश में आई हैं। दूसरों के दुख को देखकर उनका द्रवणशील हदय शीघ्र ही व्यग्र होता है और वे अपने संबंध पर बिना कोई ध्यान दिए उसकी सहायता के लिए उठ खड़े हो जाते हैं। जीवन की विशम परिस्थितियां उन्हें विचलित नहीं कर पाती और बड़े धैर्य पूर्वक सामना करते हैं–

राम–भाव अभिषेक समय जैसा रहा। वन जाते भी सहज सौम्यवैसारहा।

वर्शा हो या ग्रीश्म सिंधु रहता वही, मर्यादा की सदा साक्षिणी है महीं।13

साकेत की प्रजा को उन्होने आश्वासन दिया–

प्रजा नहीं तुम प्रकृति हमारी बन गए
दोनों के सुख–दुख एक में सन गए।
बंधु विदा दो उसी भाव से तुम हमें
वन के कांटे बनेंकीर्णकुंकुमहमें करू पापसंहार पुण्य–विस्तार मैं, भरूं भद्रता भरूं विघ्न भय बार 14

निम्नलिखित पंक्तियों में भी लोकहितवादी विचारों की अभिव्यक्ति हुई है–

चाहे जो अपने लिए वही और के अर्थ केवल स्वार्थ विचारना है अत्यंत अर्थ।[15],

उन्होंने राम के चरित्र को ईश्वरीय अवतार के साथ–साथ मानवीय सद्गुणों से भी अभी प्रेरित बताया । जब राम का अभिशेक हो रहा था तब भी राम का चरित्र वही मर्यादा भी वही है। चाहे वह किसी भी काल में हो। एक जैसा ही रहता है, में मैथिलीशरण गुप्त कहते हैं कि जब वे साकेत को छोड़कर वन की ओर गमन कर रहे थे, तो प्रजा के सुख दुख के सहकारी हो गए उन्होंने कहा विदा दो तुम उसी भाव से, ताकि मैं सारे संसार का कल्याण कर सकूँ, पुण्य का विस्तार कर सकूँ। पापों का संहार कर सकूँ। सारे संसार के विघ्नों को काट सकूँ, ऐसी मेरी कामना है। हे! साकेत के वासियों तुम मुझे आशीर्वाद दो कि वन के सारे कांटे मेरे मस्तिश्क का तिलक बन जायें।

शरणागत भाव वाली संस्कृति भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण पक्ष शरण में आए हुए का त्याग हमारे यहां आप माना जाता है, तुलसीदास ने भी कहा है–

शरणागत कहुंजेत जहिंनिज अनहित अनुमान।
ये नर पामर पाप तिनहिं विलोकत हानि।।

मानव पात्रों में राम को साकेत और मानस में भी साक्षात धर्म है, जो सगुण रूप में धर्म की प्रतिश्ठा होते हुए मानव रूप में अवतरित हुए हैं। साकेत में भी वे अखिलेश के अवतार हैं, किन्तु उनके कार्य सर्वथा मानवीय कार्य हैं। "हमारी सबसे बड़ी समस्या जीवन है और उससे परे अध्यात्म या धर्म उस युग में कोई अर्थ नहीं

रखता साकेत की धार्मिक पृश्ठभूमि का यही स्वरूप है उसमें भुक्ति और मुक्ति। भावुकता और बुद्धि का सामंजस्य है। भक्ति आकर साकेत में भावुकता बन गई है। यह समय का तकाजा है।"[16]

निष्कर्ष – मैथिलीशरण गुप्त भक्ति–भावना विनय शील व्यक्तित्व की एक प्रमुख विशेशता कही जाती है। गुप्त जी प्रकृति भक्ति भाव से आपूरित थे। मैथिलीशरण अपने महाकाव्यों के लिए मुख्य पात्र के रूप में ऐसे ही महामना चरित्रों का चयन करते हैं, उनके सभी प्रमुख पात्र स्वार्थ ही नहीं पदार्थ और परमार्थ की भी साधना करते हैं। जीवन वृत्त द्वारा स्वार्थपरक मूल्यों की नहीं वरन् परार्थपरक जीवन मूल्यों की उच्चतर मानवीय भावनाओं की प्रतिश्ठा होती है। तात्पर्य यह है कि गुप्त जी के महाकाव्यों की प्रतिश्ठा होती है। तात्पर्य यह है कि गुप्त जी के महाकाव्यों में असत्य का तिरस्कार कर सत्य की प्रतिष्ठा, स्वार्थ की अपेक्षा परमार्थ की श्रेष्ठता का महा संदेश है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. जन्म भूमि, मार्च 1903.
2. डॉक्टर भटनागर– मैथिलीशरण गुप्त पृष्ठ–33.
3. सरस्वती खंड– 1908ई0 पृष्ठ 204.
4. सरस्वती खंड–19 संख्या–5 सन् 1918.
5. डॉ0 भटनागर मैथिलीशरण गुप्त– पृष्ठ–33.
6. हिन्दू तृतीय वृत्ति पृष्ठ 113.
7, 8. गुप्त विश्णु प्रिया पृष्ठ– 117.
9. 10, 11, 12, 13, 14, 15– मैथिलीशरण गुप्त साकेत पंचम सर्ग।
16. डॉ0 नगेन्द्र– साकेतः एक अध्ययन– पृश्ठ– 157.